SHIKSHA SAMVAD
International Open Access Peer-Reviewed & Refereed
Journal of Multidisciplinary Research
ISSN: 2584-0983 (Online)
Volume-1, Issue-4, June- 2024
www.shikshasamvad.com

“योग (सर्वांग योग) के सम्बन्ध में महर्षि अरविन्द के विचार”

पंकज कुमार सिंह,
शोधार्थी,
एल0बी0एस0पी0जी0 कॉलेज, गोण्डा

प्रो0 श्याम बहादुर सिंह,
शिक्षा संकाय विभाग,
एल0बी0एस0पी0जी0 कॉलेज, गोण्डा

सारॉंश

श्री अरविन्द की योग साधना महज कुछ क्रियाओं तक सीमित नहीं है। यह किसी कूप जल के भांति नहीं है, अपितु यह योग की धारा काफी विस्तृत है शायद गोमुख से निकलती गंगा की धारा के समान। महर्षि अरविन्द ने अपनी योग साधना को पूर्ण योग या सर्वांग योग कहा है। श्री अरविन्द का योग छः प्रकार की योग क्रियाओं का समन्वित रूप है, जिसमें हठ योग, ज्ञान योग, भक्ति योग, कर्मयोग, राजयोग और जपयोग सम्मिलित है। यह योग सभी योगों से ग्राह्‌य चीजों को स्वीकार करता है। इसकी प्रकृति आन्तरिक और प्रवृत्ति समावेशी है।

श्री अरविन्द ने योग के सम्बन्ध में कुछ भ्रांतियों के निवारण के सम्बन्ध में उन्होंने कहा था। मेरा योग मस्तिष्क के पूर्ण सन्तुलन की मांग करता है, इसलिए जिसके मन में ऊपर–ऊपर से हल्की इच्छा जगी हो वे इधर न आयें क्योंकि योग में उच्चतर चेतना के साथ ही प्राणिक स्तर की शक्तियों के भी घुस आने की सम्भावना रहती है।

अरविन्द की दृष्टि में योग जीवन के किसी भाग में संचालित होने वाली प्रक्रिया नहीं है अपितु यह सम्पूर्ण जीवन भर संचालित होने वाली प्रक्रिया है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि ‘‘समूचा जीवन ही योग है।’’

श्री अरविन्द योग का अभ्यास करने के लिए शान्त मन को आवश्यक मानते हैं। मन को शान्त करने के लिए दो उपाय हैं। प्रथम सक्रिय और द्वितीय तटस्थ।

भक्ति का मार्ग कर्म को प्रेरित करता है। यही कर्म भक्ति में सेवा बन जाता है। श्री अरविन्द कहते हैं–कि मेरा उदाहरण तो यह है कि जब भी मुझे भय लगा, मैं अदबदा कर वही काम करता, जिससे भय लगता मृत्यु तक के खतरे को उठाते हुए और अचानक देखा कि मैं भयमुक्त हूँ। वास्तव में भयमुक्त होने के लिए हमे अहं छोड़ कर कार्य करना होगा।

शब्द संकेत :– *सर्वांग योग, अतिमानस, समावेशी, दिव्य चेतना, आत्मिकता, आध्यात्मिकता अतिमानसिकता, अभीप्सा, ईमानदारी, विश्वास।*

भारतवर्ष ने अपने ज्ञान, विज्ञान और समावेशन की योग्यता के द्वारा सम्पूर्ण विश्व को प्रभावित किया है। सम्पूर्ण विश्व को ज्ञान का उच्चतम व श्रेष्ठतम् स्वरूप 'वेद' प्रदान करने वाला भारत ही है। यदि भारत में प्रचलित दो दार्शनिक विचारधाराओं को देखा जाये तो प्रथम विचारधारा आस्तिक कहलाती है जो वेदों में पूर्ण विश्वास रखती है। जबकि दूसरी विचारधारा नास्तिक विचारधारा कहलाती है। जो वेदों को प्रमाणित नहीं मानती है। भारतीय दार्शनिक विचारधारा में योग दर्शन अत्यन्त उच्च स्थान रखता है। यह योग शरीर को आत्मा से, व्यक्ति को व्यक्ति से, राष्ट्र को राष्ट्र से तथा जीव को ब्रह्म से जोडता है। भारतीय दार्शनिक विचारधारा में व्यक्ति के अस्तित्व ज्ञान हेतु तथा आत्म साक्षात्कार के लिए योग अत्यन्त आवश्यक है। योगेश्वर भगवान श्री कृष्ण ने भगवद् गीता में ज्ञानयोग, भक्ति योग तथा कर्म योग की विशद व्याख्या की है।

योग दर्शन के मूल तत्व वैदिक दर्शन में यत्र–तत्र पाये जाते हैं। योग दर्शन को सुव्यवस्थित रूप में पिरोने का श्रेय महर्षि पातन्जल को जाता है।

महर्षि पतन्जलि ने ''योग सूत्र'' नामक ग्रन्थ की रचना की है, इसलिए इस दर्शन को पातन्जल दर्शन या पातन्जल सूत्र भी कहा जाता है। महर्षि पतन्जलि के शब्दों में ''योग चित्त वृत्तियों का निरोध है अर्थात् मन की वृत्तियों को रोकना ही योग है। यदि योग के तीन प्रमुख विचारकों का नाम लिया जाये तो योगेश्वर श्री कृष्ण, महर्षि पतन्जलि तथा महर्षि अरविन्द आते हैं।

कलकत्ते से ग्यारह मील दूर हुगली जिले के एक गॉव कोन्नगर में महर्षि अरविन्द के पितामह श्री कालीप्रसाद घोष व उनकी पत्नी श्रीयुक्ता कैलाश कामिनी घोष रहते थे, उनके पुत्र का नाम था डॉ0 कृष्णधन घोष। यह अत्यन्त उदार स्वभाव के थे।

डॉ0 कृष्णधन घोष का विवाह 1865 ई0 में श्री राज नारायण बोस की पुत्री स्वर्णलता से हुआ। डॉ0 कृष्णधन घोष के पिता के स्वर्गवास तथा माता के काशीवास से परिवार पर दुखों का पहाड़ टूट पड़ा। इसी बीच 15 अगस्त 1872 ई0 को तीसरी संतान के रूप में श्री अरविन्द का जन्म हुआ। इस बालक ने आधुनिक मानवता के सम्मुरव उपस्थित अनेक समस्याओं का उत्तर दिया और आगे चलकर उत्तर योगी के रूप में विख्यात हुआ। ज्ञान और तप की उच्चतम सीमा तक पहुँचने वाले व्यक्ति को महर्षि कहा जाता है।

श्री अरविन्द ही एक ऐसे व्यक्ति हैं जो उन्नीसवीं शताब्दी में महर्षि कहलाने के पूर्ण उत्तराधिकारी हैं।

श्री अरविन्द की योग साधना महज कुछ क्रियाओं सीमित नहीं है। यह किसी कूप जल के भांति भी नहीं है, अपितु यह योग की धारा काफी विस्तृत है। शायद गोमुख से निकलती गंगा की धारा के समान महर्षि अरविन्द ने अपनी योग साधना को पूर्ण योग या ''सर्वांग योग'' कहा है।

यह पूर्ण योग साधक को स्थान और समय की सीमा में भगवत चेतना की प्राप्ति कराता है, यह योग ईश्वर की प्राप्ति को पूर्ण योग मानता है। समग्र योग व्यक्ति के सांसारिक व आध्यात्मिक जीवन के बीच सामंजस्य स्थापित करता है। यह योग व्यक्ति को जीवन को खोये बिना भी ईश्वर की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करता है।

महर्षि अरविन्द मात्र मानवीय पूर्णता को प्राप्त करना अपना लक्ष्य निर्धारित नहीं करते हैं, अपितु वह व्यक्ति में दिव्य चेतना की प्राप्ति अपना लक्ष्य निर्धारित करते हैं।

श्री अरविन्द अपनी महत्वपूर्ण कृति ''दिव्य जीवन'' में स्वयं कहते हैं, कि हम अपने योग में जो करना चाहते हैं, वह सामान्य पार्थिव तथा मानसिक मनुष्य को निर्मित करने वाली हमारे अतीत और वर्तमान की समूची रचना को विसर्जित कर अपने भीतर एक दिव्य मानवता अथवा एक अतिमानवीय प्रकृति को गठित करने वाली अर्न्तदृष्टि के एक नए केन्द्र तथा गतिविधियों के एक नए विश्व के निर्माण से कुछ कम न होगा।

अरविन्द का योग एकांगी न होकर सभी प्रकार के योगों का संश्लेषण है, जिसमे शास्त्रीय योग तथा अभ्यास की छः शाखाओं का संश्लेषण किया गया है, जिनमें प्रथम–हठ योग, द्वितीय–कर्मयोग, तृतीय–राजयोग, चतुर्थ–ज्ञानयोग, पंचम–भक्ति योग और षष्ठ्म–जप योग है।

श्री अरविन्द का एकात्म योग या सर्वांग योग सभी योग विचार धाराओं से ग्राह्य चीजों को स्वीकार करता है। इसका आशय यह नहीं है कि उन योग प्रणालियों में कुछ कमी है, या फिर उनमें कुछ अग्राहय है।

श्री अरविन्द एक नया प्रगतिशील व प्रयोगसिद्ध योग की विचारधारा प्रस्तुत करना चाहते थे। इनके योग की प्रकृति बाह्य न होकर आन्तरिक है। इसकी प्रवृत्ति समावेशी है। इनके योग में नयापन है, जो व्यक्ति में ईश्वरीय चेतना के प्रवाह का कारण है।

यह योग मनुष्य में ईश्वर का अतिप्रवाह है। इसमें व्यक्ति अपने अंदर के ईश्वर को पहचान लेता है। वह व्यक्ति नैतिक आचरण करते हुए दिव्य पूर्णता की प्राप्ति करता है। इसके लिए समग्र योग सहायता करता है कि व्यक्ति को संसार से या फिर कर्ममार्ग से विलग नहीं करता है, अपितु कर्म करते हुए दिव्य पूर्णता लाने के लिए तत्पर करता है।

योगेश्वर श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं'' योगः कर्मुसु कौशलम् तथा ''समत्वं योग उच्चते'' अर्थात् व्यक्ति के लिए निर्धारित अपने कर्म को कुशलतापूर्वक करना योग है। मानवीय जीवन की विभिन्न परिस्थितियों जैसे– सुख–दुख, हानि–लाभ, यश–अपयश और जीवन–मरण में समभाव रहना ही एक प्रकार का योग है। श्री अरविन्द भी सर्वांग योग में यही कहना चाहते हैं।

वास्तव में अरविन्द को अलीपुर कारागार में रहते हुए दिव्य अनुभूतियां हुई थीं। आपने योगेश्वर कृष्ण के विराट व्यक्तित्व व चरित्र का चिंतन कर सम्यक ज्ञान प्राप्त किया था। आपकी दृष्टि में जीवन का कोई कालखण्ड ही योग साधना के लिए नहीं बना है, अपितु सम्पूर्ण जीवन ही योग है।

ऋग्वेद में कहा गया है ''उदुत्तम मुमुग्धि नो विपाशं मध्यम चृत अवधामनि जीव से'' अर्थात् सिर के, उदर के, पैरों के पाश को काट दो ताकि सारा जीवन मुक्त हो जाये।

तत्कालीन समय में लोग योग और अध्यात्म को अपनाने वाले व्यक्ति को मानसिक रूप से स्वस्थ नहीं मानते थे। एक बार श्री अरविन्द के एक शिष्य ने ही मजाक में कहा था–''प्रायः यह धारणा है कि यदि आपके दिमाग का पुर्जा ढीला नहीं है, तो आप योगादि की ओर नहीं झुकेंगे। यानि दिमाग जितना ही ढीला और गड़बड़ हो, साधना की उतनी ही सम्भावना बढ़ जाती है।''

ऐसी परिस्थिति में अरविन्द योग को लेकर क्रान्तिकारी रूप में अवतरित हुए। यह क्रान्ति तत्कालीन विचारधाराओं के विरूद्ध थी। यह क्रान्ति विध्वंसात्मक नहीं, अपितु सृजनात्मक थी। यह क्रान्ति समावेशी थी।

अरविन्द का समग्र योग मानव को पूर्ण तत्व प्रदान करता है, जो व्यक्ति के ज्ञानात्मक पक्ष, भावात्मक पक्ष और क्रियात्मक पक्ष सभी को प्रभावित करता है व व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास करता है। इसी विश्वास व दृढ़ता के साथ महर्षि अरविन्द ने योग व अध्यात्म का ध्वज पूर्ण निष्ठा के साथ उठाया। उन्हीं के शब्दों में–''मेरा योग मस्तिष्क के पूर्ण सन्तुलन की मांग करता है, इसके लिए जिसके मन में ऊपर–ऊपर हल्की इच्छा जगी हो, वे इधर न आयें क्योंकि इस योग में उच्चतर चेतना के अवतरण के लिए उद्घाटित होने की सम्भावना के साथ ही प्राणिक स्तर की शक्तियों के भी घुस आने की सम्भावना रहती है। इसलिए यदि किसी आदमी के पास पूर्ण बौद्धिक संतुलन नहीं है, तो उन गलत शक्तियों द्वारा अधिकृत होने की आशंका हो सकती है। अक्सर वे लोग जो अदृश्य सत्ता में विश्वास नहीं रखते, उनसे जो उसमें या तान्त्रिक क्रियाओं में विश्वास रखते हैं, कहीं ज्यादा ठीक और अच्छे रहते हैं।''

श्री अरविन्द वैष्णव धर्म से अलग हटकर अपने लक्ष्य का निर्धारण करते हैं। जैसा कि सर्वविदित है वैष्णव धर्म जीवन से छुटकारा पाने को ही अपनी उपलब्धि मानता है। जबकि अरविन्द का योग व्यक्ति को जीवित रहते हुए ''स्व'' के जीवन और सत्ता का परिमार्जन करना सीखाता है। कहा जाता है कि परम वैष्णव भगवान शंकर हैं। वहीं शंकर जिनके जीवन में विष आता है तो वह स्वयं पान करते हैं और यदि अमृत आता है तो वह दूसरों को प्रदान करते हैं।

व्यक्ति में जब योग के द्वारा चेतना का उदय होता है, तो वह पाने में नहीं अपितु देने में विश्वास करता है। यह चेतना कोई पारलौकिक उपलब्धि में विश्वास नहीं करती है जिससे व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से ईश्वर साक्षात्कार कर सके। बल्कि यह ऐसी शक्ति है जिसे क्रिया के रूप में उतारा जा सके। इसी चेतना को क्रियाशील करना हमारा कर्तव्य है। यह समग्र योग व्यक्ति को अतिमानस की स्थिति में पहुँचाता है। वास्तव में अतिमानस मन या चेतना की उच्चतम अवस्था है। जब व्यक्ति समग्र योग का अनुपालन करता है तो वह अतिमानस की अवस्था में पहुँच जाता है, परन्तु यह अवस्था व्यक्ति को सहसा प्राप्त नहीं होती है। यह एक क्रमिक अवस्था का अनुपालन करते हुए आगे बढ़ती है, जिसमें प्रथम अवस्था आत्मिकता कहलाती है। इस अवस्था में व्यक्ति 'स्व'' के बारे में जान पाता है। मैं कौन हूँ? मेरे लिए विहित व निषिद्ध कर्म क्या है? इत्यादि। इसके बाद द्वितीय अवस्था आध्यात्मिकता की आती है– इसमें व्यक्ति निम्न स्तर से चलकर उच्च स्तर की ओर पहुँच जाता है। अंतिम तृतीय अवस्था–अतिमानसिकता की कहलाती है, इसमें व्यक्ति पूर्ण योग को प्राप्त हो जाता है।

अरविन्द की दृष्टि में योग जीवन के किसी भाग में संचालित होने वाली प्रक्रिया नहीं है, अपितु यह सम्पूर्ण जीवन भर संचालित होने वाली है। इसे दूसरे शब्दों में कह सकते है कि ''समूचा जीवन योग है।'' यह बाहरी थोपा हुआ नहीं है, अपितु यह प्राकृतिक है। इसके लिए व्यक्ति को समय, उत्साह, शास्त्र और गुरू की आवश्यकता होती है। ईश्वर ही गुरू की भूमिका में रहता है। उस सच्चिदानन्द स्वरूप ईश्वर को पाने के लिए व्यक्ति को अपने अहं को त्यागना होगा। उसे उत्साह से युक्त होना होगा। शास्त्र के रूप में वेदों का

SHIKSHA SAMVAD
PASSION TOWARDS EXCELLENCE

अध्ययन करना होगा, परन्तु सावधानी बरतनी होगी। यह सावधानी योग को लेकर है। यहाँ योग का अर्थ ''करना'' नहीं ''होना'' है। यह एक व्यावहारिक मनोविज्ञान है। यह एक अन्तः यात्रा है, जिसे समझना है, इसी को साधना है। इस साधना के कुछ नियम हैं, इसमें प्रथम नियम–अभीप्सा है–यह एक प्रकार की चाह है जिसमें व्यक्ति अपने जीवन को उच्चतर बनाने का प्रयास करता है। द्वितीय नियम है–ईमानदारी–बिना ईमानदारी के इच्छा की पूर्ति नहीं हो सकती है। तृतीय नियम है–विश्वास–इसमें व्यक्ति को ईश्वर, गुरू, मार्ग में विश्वास रखना होता है। मार्ग से आशय गुरू प्रदत्त सुझाव है, जिस पर किंचित् डरे हुए चलते जाना है। यदि भय या भ्रम की स्थिति आती है तो गुरू पर विश्वास रखना होगा। चतुर्थ नियम है–समर्पण–इसमें व्यक्ति ईश्वर को सब कुछ सौंप देता है। यह समस्त बाधाओं से बचने की गारन्टी है। व्यक्ति को किसी गफलत में नहीं रहना चाहिए अपितु व्यक्ति को निरन्तर चौकस रहना चाहिए।

अरविन्द योग का अभ्यास करने के लिए शान्त मन को आवश्यक मानते हैं। मन को शान्त करने के लिए दो उपाय हैं– प्रथम–सक्रिय और द्वितीय–तटस्थ। सक्रिय रूप में व्यक्ति मस्तिष्क को स्वयं खाली करता है। जबकि तटस्थ भाव में व्यक्ति मन में हो रही क्रियाओं का द्रष्टा रहता है।

श्री अरविन्द कहते हैं, ''इसके लिए मैं लेले का अत्यधिक ऋणी हूँ कि उन्होंने इस सत्य का साक्षात्कार कराया। ध्यान के लिए बैठ जाओ, उन्होंने कहा, परन्तु कुछ भी सोचो नहीं, केवल अपने मन का निरीक्षण करो, तुम विचारों को उसके अन्दर आते देखोगे।''

यह प्रक्रिया मन को नीरव और शान्त बनाती है। यहीं से श्री अरविन्द का योग प्रारम्भ होता है। जब मन शान्त होगा तभी चैत्य पुरूष सामने आ पायेगा। शान्ति को एक ठोस और व्यापक आधार देने के लिए जरूरी है कि यह प्राणिक और शारीरिक स्तरों तक भी उतरे और सम्पूर्ण सत्ता को शान्ति से सराबोर कर दे। अरविन्द यह बताते हैं कि मस्तिष्क के खालीपन के बाद शुष्कता का एक दौर आता है। समय के साथ–साथ यह दौर गुजर जाता है। योगी यदि धैर्यवान नहीं है तो वह योगाभ्यास नहीं कर सकता है। श्री अरविन्द के शब्दों में–''सारा रहस्य तुम्हारी इच्छा में है। चाहना, इसे चाहना। बहुत मुश्किल है न? खैर–कोई बात नहीं। धैर्य रखो। योग के लिए अपार धैर्य चाहिए।''

श्री अरविन्द ''योग समन्वय'' में कहते हैं कि जीवन के किसी भी स्तर पर योग की शुरूआत की जा सकती है। यदि मानसिक रूप से तैयार है तो ज्ञान योग मदद कर सकता है, यदि हम भावना प्रधान हैं तो भक्ति योग सहायक सिद्ध हो सकता है, यदि प्राणिक शक्ति की सहायता से कर्मस्तर पर तैयार है तो हम कर्मयोग द्वारा अभ्यास कर सकते हैं। अरविन्द को दैवीय अनुभूति में श्रीकृष्ण का साक्षात्कार हुआ था। आपका योग कर्म प्रधान है, बिना कर्म के ईश्वर की प्राप्ति कैसे हो सकती है। वैष्णव धर्म में भक्ति की प्रधानता है। अरविन्द कहते हैं कि भक्ति क्या है, सिर्फ भगवान की सेवा ही न। भगवान को ठीक से समझ लो तो सेवा भी ठीक से होगी क्योंकि बिना ज्ञान के भक्ति लंगड़ी है और बिना कर्म वह निष्क्रिय। भक्ति का मार्ग कर्म को प्रेरित करता है। यही कर्म भक्ति में सेवा बन जाता है करणीय–अकरणीय कर्म क्या है प्रथम दृष्ट्या ये दोनों चीज अलग दिखायी पड़ती है। लेकिन योगी इन दोनों के बीच समन्वय को देखता है। वह कृष्ण और काली का समन्वय ही कर्म का समन्वय है योगी को भयमुक्त होना चाहिए। श्री अरविन्द कहते है कि मेरा उदाहरण तो यह है कि जब भी मुझे भय लगा, मैं अद्बदाकर वही काम करता जिससे भय लगता, मृत्यु तक के खतरे

को उठाते हुए और अचानक देखा कि मैं भयमुक्त हूँ। वास्तव में भयमुक्त होने के लिए हमें अहं छोड़कर कार्य करना होगा। अरविन्द घिसी–पिटी विचारधाराओं को स्वीकार करने के हिमायती नहीं थे। आप योग में प्रगतिशील दिव्य चेतना के पूर्ण योग की बात करते हैं। अरविन्द का योग समन्वय सम्पूर्ण जीवन को योगमय बना देता है। आपने स्वयं चालीस वर्ष की साधना के बाद नए आने वाले योगियों को कठिनाई न हो यही प्रयास किया। वे नए साधकों को पूर्ण आश्वस्त कर देना चाहते हैं कि प्रत्येक योगी को दिव्य अनुभूति व ईश्वरीय चेतना की प्राप्ति अवश्य होगी। इस राह में सबसे बड़ा व्यवधान व्यक्ति का अहं है। अरविन्द केवल कारण ही नहीं निवारण भी बताते हैं। अरविन्द ने बताया है प्रत्येक व्यक्ति के भीतर भवानी मन्दिर है। अपने अन्दर की अंतः शक्ति को जगाने के लिए तीन चीजों की आवश्यकता है। प्रथम–व्यक्ति को अपनी वासनाओं से मुक्ति चाहिए तभी वह अपनी सारी शक्ति अपने अभीष्ट पर केन्द्रित कर सकता है। द्वितीय–व्यक्ति में एकाग्रता का होना आवश्यक है यह एकाग्रता व्यक्ति के लक्ष्य के अनुसंधान में सहायक होती है और अंतिम तृतीय उपासना–यदि व्यक्ति उपासना मानवीय जीवन में कोई बदलाव लाने में सक्षम नहीं है तो वह मृत होती है। इस उपासना को जीवंत बनाने के लिए इसे मानव जीवन में सहायक होना आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

सिंह शिवप्रसाद : (2013), उत्तरयोगी श्री अरविन्द

श्री अरविन्द : (2020), दिव्य जीवन

श्रीवास्तव मदन मोहन : (2009), शिक्षा के दार्शनिक परिप्रेक्ष्य विजय प्रकाशन मन्दिर

डॉ0 शिवम श्रीवास्तव, डॉ0 एस0के0 पाल, लक्ष्मीनारायण गुप्त : (2013–2014)
शिक्षा के मूल सिद्धान्त

SHIKSHA SAMVAD
PASSION TOWARDS EXCELLENCE

SHIKSHA SAMVAD

An Online Quarterly Multi-Disciplinary
Peer-Reviewed or Refereed Research Journal
ISSN: 2584-0983 (Online) Impact-Factor, RPRI-3.87
Volume-01, Issue-04, June- 2024
www.shikshasamvad.com
Certificate Number-June-2024/04

Certificate Of Publication

This Certificate is proudly presented to

पंकज कुमार सिंह एवं प्रो0 श्याम बहादुर सिंह

For publication of research paper title

“योग (सर्वांग योग) के सम्बन्ध में महर्षि अरविन्द के विचार”

Published in ‘Shiksha Samvad’ Peer-Reviewed and Refereed Research Journal and E-ISSN: 2584-0983(Online), Volume-01, Issue-04, Month June, Year- 2024, Impact-Factor, RPRI-3.87.

Dr. Neeraj Yadav
Editor-In-Chief

Dr. Lohans Kumar Kalyani
Executive-chief- Editor

Note: This E-Certificate is valid with published paper and the paper must be available online at www.shikshasamvad.com